International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
September- 2017, Volume-4, Issue-5
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

साहित्येतिहास : अर्थ एवं महत्ता

डॉ. देवेन्द्र सिंह,
व्याख्याता, हिन्दी–विभाग,
महारानी श्री जया राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज॰)

साहित्य का इतिहास समग्र सामाजिक इतिहास का अंग हैं। एक ओर साहित्यिक रचनाएँ सामाजिक इतिहास लेखन की स्रोत सामग्री के रूप में प्रयुक्त होती रही हैं तो दूसरी ओर उनका अपना स्वतंत्र इतिहास भी होता है। साहित्य और समाज के घनिष्ठ सम्बन्ध के कारण सामाजिक इतिहास में साहित्य का इतिहास मौजूद होता है वहीं साहित्य के इतिहास में समाज का इतिहास भी देखा जा सकता है। इस घनिष्ठ सम्बन्ध के बावजूद साहित्य के इतिहास का भिन्न अर्थ है, भिन्न स्वरूप है, भिन्न प्रकृति है, स्वतंत्र परम्परा है तथा अपनी निजी समस्याएँ हैं। निष्कर्ष यह कि साहित्य के इतिहास का अपना वैषिष्ट्य है।

1. साहित्येतिहास का अर्थ

साहित्येतिहास शब्द **साहित्य** और **इतिहास** के योग से निर्मित है। **संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ** के अनुसार **साहित्य** की व्युत्पत्ति **साहित+यञ त्र साहित्य** है। अर्थात् "सहित का भाव, एक साथ होना, रहना या वाक्य में परस्पर सापेक्ष पदों का एक क्रिया में अन्वित होना। गद्य और पद्य, सब प्रकार के उन ग्रन्थों का समूह जिनमें सार्वजनिक हित सम्बन्धी स्थायी विचार रक्षित रहते हैं। वे सभी लेख, ग्रन्थ आदि जिनका सौदर्य गुण, रूप या भावुकता पूर्ण प्रभावों के कारण समाज में आदर होता हैं।"[1] **हिन्दी साहित्य कोष**[2] के अनुसार, "साहित्य का अर्थ है शब्द और अर्थ का यथावत सहभाव, अर्थात साथ होना। इस प्रकार सार्थक शब्द मात्र का नाम साहित्य है।" अपने व्यापक अर्थ में साहित्य **वाङमय और लिट्रेचर** का समानार्थी माना जाता रहा है जबकि विषिष्ट अर्थ में यह ललित साहित्य का द्योतक है। समस्त शब्द साधना **विषिष्ट अर्थ** में साहित्य नहीं कहा जा सकता। किसी शाब्दिक रचना को साहित्य का दर्जा पाने के लिए उसमें भाव, विचार और कल्पना का उचित संयोजन आवष्यक है। रचनात्मक और सामान्य साहित्य के अन्तर को स्पष्ट करते हुए **सुमन राजे** ने लिखा है, "वस्तुतः साहित्य एक द्विमुखी प्रक्रिया है और दोनों तरफ से आनंद से जुड़ी हुई हैं। यह एक बहुत बड़ा अन्तर है जो रचनात्मक साहित्य और सामान्य साहित्य में पाया जाता है।"[3] **इतिहास** का अर्थ है अतीत का **क्रमबद्ध, सुसंबद्ध, अन्वेषणात्मक** और **सोद्देष्य** मूल्यांकन। इस तरह साहित्य का इतिहास साहित्यिक रचनाओं का क्रमबद्ध विवेचन है। **डॉ॰ अमरनाथ** के अनुसार,

"साहित्य के इतिहास में हम प्राकृतिक घटनाओं व मानवीय क्रियाकलापों के स्थान पर साहित्यिक रचनाओं का अध्ययन ऐतिहासिक दृष्टि से करते हैं। साहित्यक रचनाएँ साहित्यकारों की सर्जनात्मक क्रियाओं और प्रवृत्तियों की सूचक होती है। अतः उनके इतिहास को समझने के लिए उनके रचियताओं तथा उनसे सम्बन्धित स्थितियों, परिस्थितियों और परम्पराओं को समझना भी आवष्यक है।"[4]

प्रारम्भिक अवस्था में हर भाषा का साहित्येतिहास साहित्यकारों एवं उनकी रचनाओं का संग्रह मात्र होता है। पर्याप्त साहित्य संग्रह, साहित्यकारों के वैयक्तिक विवरण, साहित्य सम्बन्धी आवष्यक शोध कार्य तथा समृद्ध साहित्यालोचन परम्परा के विकासोपरान्त ही व्यवस्थित साहित्येतिहास लेखन संभव हो पाता है। इस स्थिति पर विचार करते हुए **नलिन विलोचन शर्मा** ने उचित ही लिखा है कि, "ऐतिहासिक बोध, राष्ट्रीय अथवा भाषागत विषेषताओं का विचार, फिर पार्थक्य में अन्तर्निहित संपृक्तता का अभिज्ञान तथा युग की प्रवृत्तियों और विकास की चेतना जब प्रत्नतत्त्वानुसंधानवृत्ति से समन्वित होते हैं और शताब्दियों से एक्त्र होती हुई सामग्री का वे अपने युग की इदान्नता की दृष्टि से उपयोग करते हैं, तब साहित्येतिहास का निर्माण होता है।"[5]

वस्तुतः 'विभिन्न युगीन सामाजिक जीवन के परिप्रेक्ष्य में साहित्य की अखण्ड एवं अविच्छिन्न भावधारा का अनुषीलन और मूल्यांकन ही साहित्य का इतिहास हैं।'[6] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मानना उचित है, लेकिन जनता की चित्तवृत्ति, लोकमंगल का विधान ही काव्य की अन्तिम परिणति नहीं है और चित्तवृत्ति ही साहित्य भी नहीं है। "साहित्य का इतिहास अभिव्यक्ति की सम्पन्नता का विन्यास भी है।"[7]

2. क्या साहित्य का इतिहास सम्भव है?

डॉ॰ आनंदनारायण शर्मा ने स्वीकार किया है कि "साहित्येतिहास अथवा साहित्य का इतिहास एक विवादास्पद अभिधा है; क्योंकि एक ओर जहाँ हम आये दिन '**साहित्य का इतिहास**' नामांकित रचनाओं का बाहुल्य देखते हैं, वहाँ दूसरी ओर ऐसे भी उनेक विद्वान हैं, जो मानते हैं कि राजनीतिक, सामाजिक या मूर्ति, चित्र–कलाओं के इतिहास के समान साहित्य का इतिहास हो ही नहीं सकता।"[8] साहित्येतिहास को विवादास्पद बनाने में इसके समर्थक और विरोधी बराबर जिम्मेदार हैं। जहाँ साहित्येतिहास के समर्थक यह मानते हैं कि साहित्य का इतिहास आवष्यक है और इसका लेखन भी संभव है वहाँ साहित्येतिहास विरोधी इसकी आवष्यकता को खारिज ही नहीं करते बल्कि साहित्य की सेहत के लिए नुकसानदायक भी सिद्ध करते हैं। साहित्येतिहास समर्थक '**सम्पूर्ण साहित्येतिहास**' की आकांक्षा के कारण अब तक लिखे साहित्येतिहासों को इतना एकांगी और अपूर्ण बताते हैं कि सहज ही यह लगने लगता है कि अभी तक

एक भी मुकम्मल साहित्येतिहास नहीं लिखा जा सका है और निकट भविष्य में भी कोई संभावना नहीं है। यहाँ साहित्येतिहास के अपूर्णतावादी एवं साहित्येतिहास विरोधी चिन्तन पर विस्तार से चर्चा करना साहित्येतिहास के अर्थ को समझने की दृष्टि से प्रासंगिक होगा।

(i) साहित्येतिहास : एक विकासमान प्रक्रिया

ये सभी ऐसे विद्वान हैं जो यह मानते हैं कि अब तक लिखे गए इतिहास दोषपूर्ण और एकांगी हैं तथा उनसे साहित्य का विकासात्मक स्वरूप पूर्णरूपेण स्पष्ट नहीं होता है। यदि सावधानीपूर्वक इन त्रुटियों का निराकरण कर दिया जाए तो ही साहित्य का वास्तविक और पूर्ण इतिहास सामने आ सकेगा। इनका मानना है कि साहित्य का इतिहास लिखना असम्भव नहीं है लेकिन इसके लिए अभी पर्याप्त साधन, सिद्धान्त और पद्धतियों का विकास नहीं हो सका है। हर इतिहास किसी न किसी पूर्वाग्रह अथवा कमजोरी षिकार हो जाता है।

पाष्चात्य विद्वानों ने साहित्येतिहासों की अपूर्णता पर गंभीरता से विवेचन किया हैं। **रेनेवेलेक और ऑस्टिन वारेन** लिखते हैं कि "साहित्य के अधिकांष इतिहास या तो सामाजिक इतिहास है या साहित्य में प्रतिबिम्बित विचारों के इतिहास अथवा ये अलग–अलग कृतियों से सम्बन्धित प्रभाव और गुण–दोष–विचार होते है, जिन्हें काल क्रमानुसार व्यवस्थित कर दिया जाता है।"[9] **डॉ. सुमन राजे** ने रेनेवेलेक के साहित्येतिहास सम्बन्धी विचारों को विस्तार से उद्धृत किया है। उनके अनुसार रेनेवेलेक ने साहित्येतिहासों की कमजोरी के कारण बताये हैं। **पहला** यह कि 'बडे पैमाने पर एक कला के रूप में साहित्य का विकास निष्चित करने का कोई प्रयत्न नहीं हुआ है।' **दूसरा** 'यह पूर्वाग्रह कि किसी अन्य मानवीय क्रियाकलाप की प्रासंगिक व्याख्या किए बिना साहित्य का इतिहास लिखना सम्भव ही नहीं है।' **तीसरा** यह है कि 'साहित्य को चित्रकला या संगीत कला की तरह स्वतंत्र कला के रूप में मान्यता नहीं मिल सकी है।' **चौथा** कारण 'साहित्य की माध्यम भाषा के कारण सृजनात्मक एवं सामान्य साहित्य के आपसी संक्रमण को माना है।' **पाँचवा** 'इतिहास एवं साहित्य के सुसंगत मेल के अभाव' को बताया हैं। और अंत में **छठा** कारण यह बताया है कि 'साहित्येतिहास के विभाजन, वर्गीकरण, विष्लेषण एवं व्याख्या में साहित्येत्तर पद्धतियों एवं अवधारणओं का सहारा बराबर लिया जाता रहा है।[10] **आलिवर एल्टन** अपने विषिष्ट इतिहास ग्रंथ **'सर्वे ऑफ इग्लिष लिटरेचर'** के बारे में स्वीकार करते हैं कि "यह वस्तुतः एक समीक्षा है, एक आलोचना है, न कि इतिहास"[11] **विलयम हेनरी हड़सन** अपनी पुस्तक **अंग्रेजी साहित्य का इतिहास** में लिखते हैं कि "अंग्रेजी साहित्य के इतिहास का उद्देष्य प्रत्येक लेखक

द्वारा व्यक्तिगत रूप से दिये जाने वाले विषिष्ट योगदान का मूल्यांकन करना है।"[12] साहित्येतिहासों में लेखकों की प्रमुखता को रेखांकित करते हुए **हिस्ट्री वर्सज क्रिटीसिज्म इन द यूनिवर्सिटीज स्टडी ऑफ लिटरेचर** में **आर॰एस॰ क्रेन** तो यहाँ तक लिखते हैं कि "साहित्य का इतिहास नहीं होता, केवल साहित्य के रचियताओं का होता हैं।"[13]

साहित्य के इतिहास दर्षन पर हिन्दी में सर्वप्रथम **डॉ॰ नलिन विलोचन शर्मा** ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक **साहित्य का इतिहास दर्षन** में पाष्चात्य विचारकों के अध्ययन–मनन के उपरान्त लिखा है कि, अधिकांष साहित्येतिहासों में 'वास्तविक ऐतिहासिक विकास के विभावन का अभाव रहता है' तथा ऐसा इतिहास संभव नहीं हो पाता जो 'साहित्यिक भी हो और इतिहास भी'।[14] अक्सर 'साहित्यिक इतिहास ढीले सूत्र में गुँथी आलोचनाओं का रूप ग्रहण करता रहा है'[15] उनका मानना है कि 'कला कृतियों की किसी श्रेणी के विकास का अध्ययन परम दुष्कर कार्य है।'[16] वे निष्कर्षतः लिखते हैं कि "अस्तु, तात्पर्य यह है कि अधिकतर साहित्य के इतिहास या तो सभ्यता के इतिहास हैं या आलोचनात्मक निबन्धों के संग्रह।"[17] वे गौणों की उपेक्षा को अनुचित बताते हुए लिखते हैं कि "साहित्यिक इतिहास का विषय भी यदि विस्तार है, तो महान लेखकों से अधिक महत्त्व उन गौणों (डपदमते) का है, जिनसे विस्तार निर्मित होता है। हिन्दी साहित्य के इतिहासों में इन महान गौणों की उपेक्षा हुई है।"[18]

डॉ॰ आनंदनारायण शर्मा अपने शोध प्रबंध **हिन्दी साहित्य का इतिहास दर्षन** में साहित्येतिहासों को 'सभ्यता या सामाजिक विचारधारा का इतिहास' होने के **रेनेवेलेक** आदि विद्वानों के आरोपों को 'बहुत कुछ संगत–बताते हुए इसका दोषी उस समीक्षा प्रणाली को मानते हैं 'जो किसी कृति के विचार या दर्षन पक्ष पर बहुत जोर देकर कला–नैपुण्य की उपेक्षा करती आई हैं।' उनका मानना है कि, "साहित्यक इतिहास को कला चेतना के विकास का आलेख भी तो होना ही है क्योंकि साहित्य केवल विचार नहीं, वह विचारों की अभिव्यक्ति का विषिष्ट प्रकार भी हैं।"[19] लेकिन वे यह भी स्वीकार करते हैं कि 'साहित्य के इतिहास में कलात्मक विकास की चर्चा प्रायः कृतिकार की वैयक्तिक उपलब्धि का विवेचन बनकर रह जाती है' और परिणामतः 'साहित्यिक इतिहास ढीले सूत्र में गुँथी आलोचनाओं का रूप ग्रहण कर लेता हैं।'[20]

□□अज्ञेय के विचार – हिन्दी साहित्य में युगीन प्रवृत्तियों के निरूपण पर अत्यधिक बल होने पर हीरानंद सच्चिदानंद वात्सायन अज्ञेय को ऐसा प्रतीत होता है कि "हिन्दी साहित्य व्यत्तिगत कृतित्त्व की अपेक्षा प्रवृत्तियों का साहित्य रहा है और इतिहास में प्रमुख स्थान अलग–अलग महान प्रतिभाओं का नहीं बल्कि वैचारिक आन्दोलनों और संवेदना के रूप परिवर्तन का रहा है।"[21]

International Journal of Education and Science Research Review
September- 2017, Volume-4, Issue-5 E-ISSN 2348-6457 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

डॉ॰ मैनेजर पांडेय ने अपनी प्रतिष्ठित पुस्तक **साहित्य और इतिहास दृष्टि** में "साहित्येतिहास में अतीत और वर्तमान के अलगाव को साहित्येतिहास की अनिवार्य दुर्बलता नहीं मानते बल्कि गलत इतिहास दृष्टि का परिणाम मानते हैं।"[22] **डॉ॰ पांडेय** विधेयवादी इतिहास स्वरूप को दोषी मानते हुए लिखते हैं कि "जब इतिहासकार रचना को भूलकर केवल परम्परा, परिवेष और प्रभाव का विवेचन करता है तब इतिहास अधूरा और एकांगी हो जाता है। विधेयवादी इतिहास के स्वरूप के कारण इतिहास और आलोचना का अलगाव हुआ। रचना के कलात्मक मूल्य का विष्लेषण आलोचना का विषय बन गया और इतिहास परम्परा तथा परिवेष के विष्लेषण तक सीमित हो गया।"[23] वे वस्तुवादी एवं रूपवादी अतिवाद का विरोध करते हुए कहते हैं कि "वस्तुवादी इतिहासकार रचना में वस्तु को केन्द्रीय महत्त्व देकर साहित्य के विकास के दौरान वस्तु सम्बन्धी परिवर्तनों की ही व्याख्या करते हैं। रूपवादियों की धारणा है कि रूप वस्तु को रूपान्तरित कर लेता है; इसलिए रूपों का विकास ही साहित्य के इतिहास का मूल विषय है। कला और साहित्य में वस्तु और रूप के सम्बन्ध के बहुचर्चित विवाद में न पड़कर यह स्वीकारना उचित होगा कि साहित्येतिहास के वस्तुवादी और रूपवादी दृष्टिकोण जब एकांगी अतिवादी चिन्तन प्रक्रिया के षिकार होते हैं तब साहित्येतिहास का अधूरा या विकृत रूप ही सामने आता है।"[24]

ध्यान से देखने पर पता चलता है कि उपर्युक्त सभी अपूर्णताएँ या तो अभावात्मक हैं या एकांगी और अतिवादी दृष्टि का परिणाम है। ये अपूर्णताएँ साहित्येतिहास लेखन सामग्री व उपकरणों के अभाव, साहित्येतिहास लेखन सिद्धान्तों के अपूर्ण विकास तथा साहित्येतिहासकारों की अतिवादी वैचारिक प्रतिबद्धता, एकांगी दृष्टि एवं वैयक्तिक सीमाओं का परिणाम है। ये सभी दोष साहित्येतिहासों में उनकी विषय वस्तु एवं साहित्येतिहास दृष्टि के संतुलन की माँग करते हैं। साहित्य और इतिहास, अतीत और वर्तमान, इतिहास और आलोचना प्रमुख और गौण कवि, वस्तु और रूप, नये और पुराने, तथ्यपरकता और रचनात्मकता, साहित्यिक और साहित्योत्तर मूल्य, साहित्य पर प्रभाव और साहित्य के प्रभाव तथा रचना, साहित्यकार और परिवेष के समग्र एवं संतुलित उपयोग से ही साहित्य की विकासपरक निरन्तरता को दर्षाने वाला मुकम्मल साहित्येतिहास संभव है। यहाँ यह सत्य कहना भी आवष्यक है कि पूर्णतः निर्दोष रचना एक काल्पनिक अवधारणा है। वस्तुतः "पूर्णता एक आदर्ष है जिसकी ओर हम बढ़ते हैं और बढ़ने के साथ इसकी दूरी भी बढ़ती जाती है। हम इस तक पहुँच ही नहीं सकते, परन्तु यह संकल्पना न हो तो हम रसातल को चले जायेंगे। विधाता भी पूर्ण सृष्टि करना चाहता तो सृष्टि होती ही नहीं।"[25]

(ii) साहित्येतिहास : अस्वीकारवादी चिन्तन

कुछ ऐसे विचारक हैं जो यह मानने को तैयार नहीं है कि साहित्य का भी कोई इतिहास होता है या हो सकता है। अपनी पुस्तक **'साहित्य का इतिहास दर्षन'** में इस वर्ग के विद्वानों के मत का निष्कर्ष और अपना अभिमत देते हुए **नलिन विलोचन शर्मा** लिखते हैं कि "इस दृष्टिकोण के विद्वानों के मत का निष्कर्ष है कि साहित्यिक इतिहास सही अर्थ में इतिहास है ही नहीं, क्योंकि यह वर्तमान का, सार्वभौम का, शाष्वत का ज्ञान है। यह ठीक है भी कि राजनीतिक इतिहास और कला के इतिहास में थोड़ा वास्तविक अन्तर है। जो ऐतिहासिक और अतीत है तथा जो ऐतिहासिक होने के बावजूद किसी न किसी तरह वर्तमान है, उनमें भेद तो है ही।"[26] साहित्येतिहास विरोधी साहित्य के इतिहास को **'वर्तमान से पलायन का साधन', 'अतीत के गढ़े मुर्दे उखाड़ने का फल', 'अतीत की अंध पूजा' 'वर्तमान का तिरस्कार', 'काल प्रवाह में विलीन रचनाओं का अजायवघर', 'वर्तमान समस्याओं से बचने का बहाना', 'विकास, प्रगति और कर्म, का निषेध', 'आलोचना का दुष्मन'** तथा **'पुरातात्विक चिन्तन** कहकर कटु से कटुतर आलोचना कर उसे ध्वस्त करने पर उतारू हैं।[27]

पाष्चात्य विद्वानों में **डब्लू.पी. कर** का स्पष्ट मत है कि "साहित्यिक इतिहास की कोई आवष्यकता ही नहीं है क्योकि इसका विषय सदैव विद्यमान है, सार्वकालिक है, जिसके कारण उनका कोई इतिहास हो ही नहीं सकता।"[28] **शोपेनहार** लिखते हैं कि "कला सदैव अपने लक्ष्य तक पहुँचती है, इसकी कभी उन्नति नहीं होती, यह पीछे नहीं छोड़ी जा सकती और न इसकी पुनरावृत्ति ही संभव है।"[29] **टी.एस. एलियट** को उद्धृत करते हुए **नलिन विलोचन शर्मा** लिखते हैं कि "टी.एस. एलियट तो कलाकृति की अतीनता ही अस्वीकृत कर देते हैं। उनका कहना है कि 'होमर से लेकर समस्त योरोपीय साहित्य का यौगपदिक अस्तित्त्व है और वह एक यौगपदिक क्रम का निर्माण करता है।"[30] **विलियम राकर्ट** ने भी इस समस्या को स्वीकारते हुए लिखा है कि "आजकल ऐतिहासिक चेतना से पलायन की आकांक्षा बहुत प्रबल और लोकप्रिय है, और इसे पूरा करने के साधन भी अनन्त है।"[31] **वेटसन** मानते हैं कि "इतिहास और साहित्य तेल और पानी की तरह हैं, उनमें कभी कोई एकता सम्भव नहीं।"[32]

हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक **डॉ. मैनेजर पांडेय** पे अपनी पुस्तक **'साहित्य और इतिहास दृष्टि'** में इतिहास विरोधी चिन्तन पर गम्भीर और विस्तार पूर्वक विवेचन प्रस्तुत किया है और समस्त इतिहास विरोधी मतों का खण्डन करते हुए इतिहास की आवष्यकता स्थापित की है। वे इतिहास विरोधी चिन्तन के लिए **विधेयवादी इतिहासवाद** को दोषी करार देते हुए लिखते हैं कि "इस यांत्रिक इतिहासवाद के विरुद्ध व्यापक प्रतिक्रिया हुई और इतिहस विरोधी साहित्य चिन्तन का एक लम्बा दौर आया।"[33] उनका कहना है कि "पिछले

चालीस पचास वर्षों में इतिहास विरोधी साहित्य चिन्तन के जो प्रमुख सिद्धान्त और सिद्धान्तकार आलोचना के क्षेत्र में आए हैं वे मूलतः रूपवादी ही हैं।"[34] इन रूपवादी इतिहास विरोधी आलोचना सिद्धान्तों की क्रमषः खबर लेते हुए लिखते हैं कि "नई समीक्षा आलोचना के उस द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक दृष्टिकोण का दुष्मन है जिससे इतिहास विवेक उत्पन्न होता है।"[35] **मनोवैज्ञानिक आलोचना** अपने व्यक्तिवादी स्वरूप एवं रचनाकार की सामाजिक चेतना की उपेक्षा के कारण इतिहास विरोधी है। **प्रतीकवादी और बिम्बवादी** काव्य सिद्धान्त सामाजिक संवेदनषीलता और नैतिक मूल्य दृष्टि को अनावष्यक मानने के कारण साहित्येतिहास विरोधी है। "**अतिक्रांतिवादी नव मार्क्सवादी** इतिहास को पुराणपंथियों का क्रांतिविरोधी वैचारिक हथियार समझकर उसका विरोध करते हैं।"[36] '**संरचनावाद** विकास, परिवर्तन और प्रगति की धारणाओं का विरोधी होने कारण मानव समाज, संस्कृति और इतिहास के लिए हानिकर है और साहित्य के इतिहास के लिए अनुपयोगी भी।'[37] षैली विज्ञान में केवल शैली के विष्लेषण एवं साहित्य के सामाजिक आधार की उपेक्षा करने तथा **रिफेटर** द्वारा 'साहित्येतिहास को शब्दों का इतिहास बनाने की आकांक्षा से शैली विज्ञान और साहित्य के इतिहास के बीच सार्थक सम्बन्ध की संभावना समाप्त हो जाती है।'[38] "समकालीन कला संवेदना की मीमांसा तक सीमित होने **'परम्परा विरोधी होने'** एवं **'इतिहास को नवीनता विरोधी'** मानने के कारण आधुनिकतावादी चिन्तन में ऐतिहासिक चेतना का क्रमषः ह्रास दिखाई देता है।"[39] इधर **उत्तर आधुनिकतावादी चिन्तन** में **अतीत से पूरी तरह अलगाव की साधना** के परिणाम स्वरूप इतिहास चेतना, इतिहास दर्षन और इतिहास लेखन की संभावना और आवष्यकता समाप्त होना स्वाभाविक ही हैं।[40] **डॉ॰ पांडेय** साहित्य के इतिहास के विरोध को **'साहित्य की सामाजिकता की हत्या'** करार देते हुए लिखते हैं कि "**साहित्य का दर्षन** और **साहित्य का विज्ञान** निर्मित करने वाले आलोचक साहित्य के इतिहास का खण्डन करके साहित्य की **साहित्यिकता** और **आन्तरिकता** को बचाने के प्रयत्न में साहित्य की सामाजिकता की हत्या करने पर तुले हुए हैं।"[41]

ध्यान से देखने पर पता चलता है कि अतीत से मुक्ति, वर्तमान की महत्ता, नवीनता का मोह, रूपवादी सिद्धान्तों के विकास, साहित्य के सामाजिक आधारों से विमुखता एवं साहित्य की प्रकृति को आधार बनाकर साहित्येतिहास की आवष्यकता और संभावना को नकारने का प्रयास किया गया है। इस नकार के मूल में जहाँ एक ओर साहित्य की सामाजिकता, अतीत का मोह एवं साहित्येतिहास चेतना के अतिवाद के विरोध की प्रतिध्वनि सुनाई देती है वहाँ दूसरी ओर से विचारक स्वयं इतिहास व विचारधारा से मुक्ति, नवीनता की झक एवं रूपवादी अतिवाद के षिकार हो गये हैं। हमें यह स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि जब तक

अतिवादी सनक से मुक्त न होंगे को उतार कर नहीं फैंका जायेगा तब तक किसी संतुलित दृष्टि की आषा करना **मृगमरीचिका** ही सिद्ध होगी।

इन दोनों दृष्टियों के विवरणों के उपरान्त हम स्पष्ट रूप से यह कह सकते हैं कि जहाँ अपूर्णतापरक चिन्तन साहित्येतिहास विरोधी नवीन क्षितिजों की ओर संकेत करता है वहाँ साहित्येतिहास विरोधी चिन्तन साहित्येतिहासकारों के समक्ष एक जबरदस्त चुनौती प्रस्तुत कर रहा है। इतिहास इस बात का गवाह है कि चुनौतियाँ सदैव विकास की सीढ़ियाँ सिद्ध होती हैं। ये विरोधी से लगने वाले चिन्तन ही कालान्तर में साहित्येतिहास दर्षन के विकास में **मील के पत्थर** साबित होंगे। हमें सभी विचारों को **निंदक नियरे राखिये** के भाव से ग्रहण करते हुए साहित्येतिहास की संभावनाओं को साकार करने का बीड़ा उठाना चाहिए।

(iii) साहित्येतिहास : अपरिहार्यतावादी चिन्तन

साहित्येतिहास विरोधी चिन्तन में साहित्य के इतिहास की संभावना और आवष्यकता को नकारने के बाद यह प्रष्न उठना स्वाभाविक है कि आखिर साहित्य के इतिहास की जरूरत क्या है? अर्थात् इसकी आवष्यकता किसके लिए है? इसका प्रयोजन क्या है? सामान्य तौर पर कहा जा सकता है कि **इतिहास** की आवष्यकता ही **साहित्य के इतिहास** की आवष्यकता है। **स्मरणीय अतीत** ही इतिहास है। यह **स्मरणीयता** ही इतिहास के महत्त्व को इंगित करती है। अतीत वह नींव है जिस पर वर्तमान और भविष्य का महल खड़ा होता है। अतीत ऐसी अनिवार्यता है जिससे मुक्ति असंभव है; वह अतीत चाहे समाज का हो या साहित्य का।

पाष्चात्य विद्वान **ज्यां ब्राण्ट कोर्टियस** इतिहास की अनिवार्यता को मानवता से जोड़ते हुए अपना दृढ़ मत रखते हैं कि "इतिहास से मुक्त होने का अर्थ है मानवता से पलायन करना और चूँकि हम मानवता से पलायन नहीं कर सकते इसलिए इतिहास से भी अलग नहीं हो सकते।"[42] इतिहास की स्मरणीयता को रेखांकित करते हुए **डब्ल्यू॰एच॰ आडेन** लिखते हैं कि "मनुष्य अपने इतिहास का निर्माता है, वह अपने अतीत को दुहराता नहीं लेकिन वह उसे विस्मृत भी नहीं करता, वह हर क्षण अपने इतिहास को विकसित करता हुआ उसे संषोधित करता है।"[43] **जी॰ हार्टमैन** लिखते हैं कि "साहित्य का इतिहास एक बौद्धिक अनुषासन के रूप में ही नहीं बल्कि साहित्य की रक्षा के लिए भी आवष्यक हैं।"[44] **रेनेवेलेक** के अनुसार "साहित्य के इतिहास का प्रयोजन है साहित्य की प्रगति, परम्परा, निरंतरता और विकास की पहचान करना"[45]

डॉ॰ गणपति चन्द्र गुप्त साहित्य के इतिहास को '**अतीत के हृदय और मस्तिष्क तक पहुँचने** की दृष्टि से उपयोगी मानते हैं। "अतीत के स्थूल शरीर को समझने के लिए और बहुत से साधन उपलब्ध हैं, किन्तु

उसके हृदय और मस्तिष्क तक पहुँचने का सबसे बड़ा साधन साहित्य ही है। अतः साहित्य के इतिहास का अध्ययन सभ्यता और संस्कृति के इतिहास पर आधारित होता हुआ भी उसका पूरक होगा–ऐसी आषा करना अनुचित नहीं है।"[46] साहित्य समाज का दर्पण हैं। साहित्य में समाज की धड़कन महसूस की जा सकती हैं। अतः साहित्य का इतिहास किसी समाज का सर्वाधिक प्रमाणिक और अन्तरंग इतिहास होता हैं। **डॉ॰ आनंद नारायण शर्मा** लिखते हैं कि "जहाँ सामान्य इतिहास किसी जन सामान्य की जीवन गाथा होते हैं, वहाँ साहित्य का इतिहास उसकी आत्मकथा है। उसके माध्यम से जातीय जीवन की जितनी प्रमाणिक झाँकी पाई जा सकती है, उतनी अन्य किसी वातायन से नहीं।"[47]

मैनेजर पांडेय अपनी पुस्तक **साहित्य और इतिहास दृष्टि** में साहित्येतिहास विरोधी चिन्तन को मुँहतोड़ जबाव देते हुए साहित्य के इतिहास और ऐतिहासिक चेतना की आवष्यकता सिद्ध करते हैं। वो इतिहास बोध को मानव समाज और उसकी रचनाषीलता में सहायक होने पर ही सार्थक मानते हैं तथा उसका प्रयोजन अतीत के अनुभवों का नया अनुभव कराना अतीत की रचनाषीलता की प्रासंगिकता का विवेचन करना तथा उसकी नई संभावनाओं की तलाष' करने के साथ–साथ मूल्यवान रचनाषीलता की सुरक्षा को मानते हैं।[48] **उनका मानना** है कि "जिस तरह साहित्य का समाज से सम्बन्ध होता है वैसे ही साहित्य का इतिहास समाज के इतिहास से जुड़ा होता है।"[49] **उनकी दृष्टि** में साहित्य के इतिहास से सांस्कृतिक क्रियाओं का सम्यक बोध प्राप्त होता है; मनुष्य की चेतना व्यापक बनती है; तथा वर्तमान के लिए आवष्यक विवेक भी प्राप्त होता है। इसलिए हमें 'इतिहास से ज्ञान प्राप्त कर उसे अपने अनुकूल बनाने' का प्रयास करना चाहिए।[50] अपनी **पुस्तक की भूमिका** में साहित्य के इतिहास के उद्देष्य को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि "इस तरह कलाकृतियों की उत्पत्ति, उनके अस्तित्त्व और उनके जीवन को समझने के लिए ऐतिहासिक दृष्टि आवष्यक है। ऐतिहासिक दृष्टि से साहित्य के विकास की व्याख्या करना ही साहित्य के इतिहास का उद्देष्य है।"[51] **डॉ॰ पांडेय** साहित्य विवेक और साहित्यिक समस्याओं के समाधान के लिए इतिहास बोध को आवष्यक मानते हैं। वो लिखते हैं कि "साहित्य की रचना और आलोचना की अधिकांष समस्याएँ साहित्य के इतिहास की समस्याएँ होती है, इसलिए साहित्य के इतिहास के बोध से ही ऐसी समस्याओं के समाधान खोजें जा सकते हैं। इतिहास बोध के बिना साहित्य विवेक अंधा होगा और साहित्य विवेक के बिना इतिहास बोध लंगड़ा।"[52] अतः इतिहास निर्माण के लिए इतिहास बोध आवष्यक हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी साहित्य के इतिहास को **जीवंत समाज की विकास कथा** मानते हैं तथा इसमें **अपने आपको पढ़ने का सूत्र** पाते हैं।[53] साहित्येतिहास के भावी महत्त्व की ओर इंगित करते हुए **षिवदान**

सिंह चौहान लिखते हैं कि ‟हमारे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जीवन का संघर्ष जितना ही तीव्र होता जाता हैं, सांस्कृतिक विरासत के सही मूल्यांकन का प्रष्न भी उतना ही महत्त्वपूर्ण हो जाता है और इस समस्या को हल करने के लिए वैज्ञानिक इतिहास की अनिवार्यता भी बढ़ती जाती है।”[54]

‘हिन्दी साहित्य के इतिहास पर पुनर्विचार’ करते हुए **डॉ॰ नामवर सिंह** लिखते हैं कि ‟इतिहास लिखने की ओर कोई जाति तभी प्रवृत्त होती है जब उसका ध्यान अपने इतिहास के निर्माण की ओर जाता है। यह बात साहित्य के बारे में उतनी ही सच है जितनी जीवन के।”[55] इतिहास लेखन की आवष्यकता को स्पष्ट करते हुए वे पुन लिखते हैं कि ‟यदि किसी युग के बहुसंख्यक समाज में परम्परा का जीवित बोध हो तो संभवतः साहित्य के इतिहास की कोई आवष्यकता ही न रहे। कालक्रम से यह परम्परा टूट गई, इसीलिए अतीत को वर्तमान से जोड़ने के लिए इतिहास ग्रन्थों की आवष्यकता पड़ी।”[56]

संदर्भ सूची

---

1 संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ

2 हिन्दी साहित्य कोष, भाग–प्रथम, पृ॰ 846

3 सुमन राजे – साहित्येतिहास : संरचना और स्वरुप, पृ॰ 52

4 डॉ॰ अमरनाथ – हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, पृ॰ 104

5 साहित्य का इतिहास दर्षन, भूमिका, पृ॰ 03

6 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय – हिन्दी साहित्य का इतिहास, विषय सूची

7 रामखिलावन पाण्डेय – हिन्दी साहित्य का नया इतिहास, पृ॰ 15

8 आनंदनारायण शर्मा – हिन्दी साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 16

9 साहित्य सिद्धान्त (थियरी ऑफ लिटरेचर) पृ॰ 334, (उद्धृत आनंद नारायण शर्मा – हिन्दी साहित्य का इतिहास दर्षन पृ॰ 16)

10 हिन्दी साहित्येतिहास : संरचना और स्वरुप, पृ॰ 94, 95

11 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा, साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 34

12 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा, साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 36

13 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा, साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 36

14 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा, साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 34

International Journal of Education and Science Research Review
September- 2017, Volume-4, Issue-5 E-ISSN 2348-6457 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

15 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा, साहित्य का इतिहास दर्षन, भूमिका, पृ॰ 1

16 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा, साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 35

17 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा, साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 34

18 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा, साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 119

19 आनन्द नारायण शर्मा – साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 19

20 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा, साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 37

21 उद्धृत, नामवरसिंह–हिन्दी–साहित्य के इतिहास पर पुनर्विचार, नामवर संचयिता, पृ॰ 382

22 मैनेजर पाण्डेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 14

23 मैनेजर पाण्डेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 26

24 मैनेजर पाण्डेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 14–15

25 भगवान सिंह – प्राचीन भारत के इतिहासकार, पृ॰ 09

26 नलिन विलोचन शर्मा – साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 36

27 मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 04

28 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा – साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 36

29 उद्धृत – नलिन विलोचन शर्मा – साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 36

30 साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 36

31 न्यू लिटरेरी हिस्ट्री, वा॰ टप सं 3, 1975, पृ॰ 510, उद्धृत मैनेजर पांडेय, पृ॰ 16–17

32 उद्धृत मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 32

33 उद्धृत मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 26

34 उद्धृत मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 26

35 उद्धृत मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 26

36 उद्धृत मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 34

37 उद्धृत मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 59

38 उद्धृत मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 64, 70

39 उद्धृत मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 16, 24, 35 व 36

40 उद्धृत मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 37,38

41 उद्धृत मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 3

International Journal of Education and Science Research Review
September- 2017, Volume-4, Issue-5 E-ISSN 2348-6457 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

42 उद्धृत, मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 38

43 उद्धृत, मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 38

44 न्यू लिटरेरी हिस्ट्री, वा॰ ए सं–1, 1970, पृ॰ 183, उद्धृत, मैनेजर पांडेय, साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 4

45 डिस्क्रिमीनेषन्स – रेनेवेलेक, पृ॰ 143, उद्धृत वेदप्रकाष, पृ॰ 36

46 साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, पृ॰ 5–6

47 हिन्दी साहित्य का इतिहास दर्षन, पृ॰ 21

48 मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 4, 24

49 मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 39

50 मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, पृ॰ 39

51 मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, भूमिका पृ॰ टए

52 मैनेजर पांडेय – साहित्य और इतिहास दृष्टि, भूमिका पृ॰ टए

53 उद्धृत आनंदनारायण शर्मा – हमारी साहित्यिक समस्याएँ, पृ॰ 206, पृ॰ 19

54 आलोचना, इतिहास विषेषांक, पृ॰ 06

55 नामवर सिंह संचयिता, सं॰ नंदकिषोर नवल, पृ॰ 82

56 नामवर सिंह संचयिता, सं॰ नंदकिषोर नवल, पृ॰ 389

&&&&&&&&&&&&&&&&&&&
&&&&&&&&&&&&&&&